राष्ट्रीय सहारा

नई दिल्ली मंगलवार • 12 फरवरी • 2019

www.rashtriyasahara.com

चीन की शरारत

लोकतांत्रिक भारत के पड़ोसी कम्युनिस्ट चीन ने अपनी पुरानी साम्राज्यवादी नीतियों को जारी रखते हुए प्रधानमंत्री मोदी के अरुणाचल प्रदेश के दौरे का यह कहते हुए विरोध जताया है कि यह विवादित इलाका है, और यहां किसी भी तरह की गतिविधि से सरहद के सवाल जटिल हो सकते हैं। हालांकि भारत के विदेश मंत्रालय ने चीन की आपत्ति पर अपनी कड़ी प्रतिक्रिया जाहिर की है कि अरुणाचल भारत का अभिन्न अंग है और भारतीय नेता समय-समय पर यहां जाते रहते हैं, जैसा कि भारत के अन्य राज्यों में जाते हैं। चीन और भारत के बीच मैकमोहन रेखा को अंतरराष्ट्रीय सीमा रेखा माना जाता है, लेकिन चीन इसे स्वीकार नहीं करता है, और यह दावा करता है कि लद्दाख और अरुणाचल प्रदेश भारत के नहीं, बल्कि चीन के हिस्से हैं।

इसीलिए जब भी भारत का कोई नेता अरुणाचल प्रदेश के दौरे पर जाता है, तो चीन अपनी आपत्ति जताता है। नवम्बर, 2017 में राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अरुणाचल प्रदेश की यात्रा का भी चीन ने कड़ा विरोध किया था। भारतीय रक्षा मंत्री निर्मला सीतारमन ने भी जब अरुणाचल प्रदेश के सीमाई इलाकों का दौरा किया था, उस समय भी चीन ने विरोध किया था। दरअसल, चीन के क्रांतिकारी नेता माओ जेदांग ने 1950 में बीजिंग के थ्यानमन चौक पर तिब्बत और हिमालय के बारे में उदाहरण के साथ अपनी नीतियों को स्पष्ट किया था। उनका कहना था कि तिब्बत चीन के दाहिने हाथ की हथेली है, और लद्दाख, नेपाल, सिक्किम, भूटान और अरुणाचल उसकी अंगुलियां हैं। लेकिन इन अंगुलियों को हथेली से अलग कर दिया गया है। यह चिंता की बात है और यह चीन के नेतृत्व की जिम्मेदारी है कि वह इन पांचों इलाकों को आजाद कराए। चीन का वर्तमान नेतृत्व अपने महान क्रांतिकारी नेता जेदांग के सपनों को पूरा करना चाहता है, और इसीलिए समय-समय पर चीन के लाल सैनिक लद्दाख और अरुणाचल प्रदेश के सीमावर्ती इलाकों में घुसपैठ करते रहते हैं। 2009 से भारतीय इलाकों में चीनी सैनिकों की घुसपैठ की आवृत्ति बढ़ी है। पिछले साल चीनी सैनिकों ने 170 बार और 2017 में करीब साढ़े चार सौ बार भारतीय सीमा में घुसपैठ करने की कोशिश की है। चीन समझता है कि एक झूठ को बार-बार दोहराने से वह सच में तब्दील हो जाता है, लेकिन उसे यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि अरुणाचल और लद्दाख के मामले में भारत का पक्ष मजबूत है, इसलिए उसके नापाक मंसूबे कभी पूरे नहीं होंगे।

विधायक की हत्या

पश्चिम बंगाल के नादिया जिले में तृणमूल कांग्रेस के विधायक सत्यजीत बिस्वास की हत्या के मामले में भाजपा नेता मुकुल रॉय के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज होना दोनों पार्टियों के बीच परवान चढ़ रहे टकराव का संकेत है। मानना मुश्किल है कि मुकुल रॉय जैसे परिपक्व नेता हत्या कराने की सीमा तक राजनीति को ले जाएंगे। उन्होंने पूरी घटना की निष्पक्ष जांच की मांग की है। सरेआम एक कार्यक्रम, जिसमें प्रदेश की एक मंत्री भी उपस्थित हों, में सत्तारूढ़ पार्टी के विधायक की हत्या हो जाना आतंकित करने वाला है। सरकारी पक्ष का विधायक सुरक्षित नहीं तो फिर दूसरे सुरक्षित होंगे, इसकी उम्मीद कहां से की जा सकती है। फूलबाड़ी इलाके में सरस्वती पूजा पंडाल में कार्यक्रम चल रहा था, भारी संख्या में लोग उपस्थित थे। उसमें बाइक से दो नकाबपोश आकर सीधे गोली मारकर भाग जाएं, सहसा विश्वास करना कठिन है। ऐसे कार्यक्रमों में पुलिस सुरक्षा चौकस होती है। विचित्र यह भी है कि हत्यारों ने हत्या में प्रयुक्त रिवॉल्वर भी कुछ दूरी पर फेंक दी। अपराधी वारदात करने के बाद अपना कोई निशान नहीं छोड़ते। यहां उल्टी स्थिति है। जाहिर है, इसकी गंभीर जांच के साथ मुख्यमंत्री ममता बनर्जी को प्रदेश की सुरक्षा व्यवस्था की गहन समीक्षा के लिए उपयुक्त कदम उठाने चाहिए। पांच लोगों के खिलाफ प्राथमिकी में मुकुल रॉय का नाम तृणमूल के नेताओं के कहने पर डाला गया है। दो लोग गिरफ्तार हैं, जिनका पुलिस रिमांड भी मिला है। मुकुल का नाम डालने के बावजूद उनके विरुद्ध कोई प्रमाण पुलिस नहीं दे पाई है। जिस तरह किसी भी पक्ष की रजनीतिक हत्या अस्वीकार्य है, उसी तरह विरोधी पार्टी के नेता को बिना प्रमाण उसमें घसीटना भी। एक युवा विधायक की हत्या से पार्टी का गुस्सा होना स्वाभाविक है, पर यह आत्ममंथन का कारण बने तभी भविष्य के लिए बेहतर रास्ता बन सकता है। आखिर, पश्चिम बंगाल राजनीतिक हत्याओं का केंद्र क्यों बना हुआ है, इस प्रश्न का उत्तर तलाशना सत्तारूढ़ पार्टी की प्राथमिकता होनी चाहिए। यह प्रकरण बताता है कि ममता इस दिशा में विचार करने की जगह राजनीतिक दुश्मनी के भाव से कदम उठा रही हैं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है। इससे आम कार्यकर्ताओं पर विपरीत असर पड़ता है। यह मानकर कि इन्होंने हमारे नेता की हत्या की है, वे विरोधियों के खिलाफ हिंसा करते हैं, और इसका दुष्चक्र बनता जाता है।

टू दि प्वाइंट/ आलोक पुराणिक

कैमरा-फ्रेंडली दुख

दुख कई तरह का होता है, कैमरा-फ्रेंडली और नॉन-कैमरा फ्रेंडली। कैमरा फ्रेंडली दुख दर्शनीय होता है।

मुंबई के किसी फिल्म स्टार की शवयात्रा की कवरेज में बहुत टीवी न्यूज कैमरे जुटते हैं। फलांजी आएंगी, ढिमांकाजी आएंगी, कैमरा उस फिल्म स्टार का चेहरे का दुख सुबह से शाम तक दिखाता रहता है। दुख क्या दिखाता है, चेहरा दिखाता रहता है। खूबसूरत चेहरे का दुख भी कैमरा फ्रेंडली होता है। गरीब का दुख कैमरा-फ्रेंडली ना होता। कैसे तो बुच्चड़-तुड़ी-मुड़ी कपड़े पहनता है गरीब दुख का सलीका ना जानता। गरीब बुक्का फाड़कर रोता है दुख में, टीवी दर्शक का मूड खराब हो जाता है। नहीं देखना। उत्तराखंड और यूपी में सौ से ज्यादा लोग नकली शराब पीकर मर गए। सौ से ज्यादा लोगों की मौत, टीवी न्यूज कुछेक मिनट दिखाकर वापस इन खबरों पर आ गई है-प्रियंका चोपड़ा का ड्रेस सेंस इतना मेच्योर्ड क्यों है। दुख दर्शनीय ना हो, तो टीवी पर कवरेज ना आता। त्रासदी त्रासदी मानी ही तब जाएगी, जब कैमरा फ्रेंडली हो। मेघालय में अवैध खानों में कैसी त्रासद मौत मर गए मजदूर। उनके नाम भी पूरे सामने ना आए कवरेज में। दुख ग्लैमरस होने चाहिए। फलां जगह के कार्यक्रम में नृत्यबालाओं पर पुलिस वालों ने पैसे लुटाए-इस खबर के साथ तमाम टीवी चैनल कई घंटे रिपोर्ट दिखाते हैं। नृत्यबालाओं के ठुमके दर्शनीय हैं, पर उनके त्रासद चेहरों की भुखमरी और दर्द ग्लैमरस ना है, तो सिर्फ ठुमके दिखते हैं, और वो तोंदिल पुलिसवाले, जो नाचते हुए बहुत कॉमिक लगते हैं। कॉमिक चरित्र, कॉमेडी का ग्लैमरस बाजार हैं, वो दिख जाते हैं। दिख क्या जाते हैं, दिखते ही जाते हैं। मेघालय में मौत के शिकार मजदूरों के नाम नहीं आते, नृत्यबालाओं के नाम हम तक नहीं आते, जो कुछ कैमरा फ्रेंडली है, वही आएगा। मुझे डर है कि मेघालय के मृत खान मजदूरों के परिजन इस त्रासदी की तरफ सबका ध्यान आकर्षित करने के लिए खानों के दरवाजों पर डांस शो ना करवा दें। डांस शो की कवरेज के लिए जब टीवी कैमरे पहुंचे, तो टीवी पत्रकारों को दुख दर्द की सच्ची बातें बता दी जाएं। स्वाइन फ्लू से तीन मर गए-अस्पतालों में सही इंतजाम नहीं हैं-एक बंदे ने मुझे बताया है। स्वाइन फ्लू को कैमरा फ्रेंडली कैसे बनाया जाए, अब मुख्य चुनौती यह है।

आरक्षण का दर्शन

गुर्जर आंदोलन

प्रमोद जोशी

राजस्थान में आरक्षण की मांग को लेकर गुर्जर समुदाय फिर आंदोलनरत हैं। राजस्थान सरकार सांविधानिक सीमा के कारण कोई फैसला कर पाने की स्थिति में नहीं है। आरक्षण के बारे में अब नये सिरे से विचार करने का समय आ गया है। 2015 में सुप्रीम कोर्ट ने जाटों को ओबीसी कोटा के तहत आरक्षण देने के केंद्र के फैसले को रद्द करने के साथ ही स्पष्ट किया था कि आरक्षण के लिए नये आधार भी खोजे जाएं।

अदालत की दृष्टि में केवल ऐतिहासिक आधार पर फैसले करने से समाज के अनेक पिछड़े वर्ग संरक्षण पाने से वंचित रह जाएंगे जबकि हमें उन्हें भी पहचानना चाहिए। अदालत ने 'ट्रांस जेंडर' जैसे नये पिछड़े ग्रुप को ओबीसी के तहत लाने का सुझाव देकर इस पूरे विचार को एक नई दिशा भी दी थी। कहा कि हालांकि जाति एक प्रमुख कारक है, लेकिन पिछड़ेपन के निर्धारण के लिए एकमात्र कारक नहीं हो सकती। पिछले 13 वर्ष में गुर्जर आंदोलनों में 72 व्यक्तियों की मृत्यु हो चुकी है। राजस्थान के गुर्जर स्वयं को अनुसूचित जनजाति वर्ग में रखना चाहते थे, जैसा जम्मू-कश्मीर और हिमाचल प्रदेश में हैं। मीणा समुदाय ने गुर्जरों को इस आरक्षण में शामिल करने का विरोध किया क्योंकि गुर्जरों को शामिल किया गया तो उनका कोटा कम हो जाएगा। गुर्जर बाद में अति पिछड़ा वर्ग में आरक्षण के लिए तैयार हो गए पर कानूनी कारणों से एक फीसदी आरक्षण ही मिल पाया।

केंद्र सरकार ने जबसे आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के लिए 10 फीसदी आरक्षण की घोषणा की है, और उसके लिए संविधान संशोधन भी किया है, उनकी मांग फिर से खड़ी हो गई है। चुनाव करीब हैं। आंदोलन का असर चुनाव पर पड़ने की उम्मीद भी है, शायद इसी वजह से वह फिर से भड़कता नजर आ रहा है। गुर्जरों की आबादी राजस्थान में सात फीसदी है। उनके आंदोलन की शुरुआत अपने लिए पांच फीसदी आरक्षण की मांग से हुई थी। आंदोलन की शुरुआत 2006 में भरतपुर और दौसा में महापंचायतों से हुई थी। वसुंधरा राजे और अशोक गहलोत की सरकारों ने अपने-अपने दौर में उन्हें पांच फीसदी आरक्षण दिलाने की कोशिशें कीं पर कुल आरक्षण के 50 फीसदी से ऊपर हो जाने से इसे अदालत में चुनौती दी गई और वह रुक गया। राजस्थान में इस वक्त कुल आरक्षण 50 फीसदी है। इसमें 21 फीसदी ओबीसी, 16 फीसदी अनुसूचित जाति और 12 फीसदी अनुसूचित जनजाति का आरक्षण है। ओबीसी आरक्षण के अतिरिक्त 50 प्रतिशत की कानूनी सीमा में गुर्जरों को अति पिछड़ा श्रेणी के तहत एक प्रतिशत आरक्षण अलग से मिल रहा

है। चूंकि कुल मिलाकर 50 फीसदी से ज्यादा आरक्षण हो नहीं सकता, इसलिए घूम-फिरकर बातें ठहर जाती हैं। गुर्जर नेता कर्नल किरोड़ी सिंह बैंसला पूछते हैं जब आर्थिक पिछड़े वर्ग के लिए दस फीसदी आरक्षण देने में कोई अड़चन नहीं आई तो हमारे आरक्षण में पेचीदगी क्यों? गुर्जर नेता सचिन पायलट खुद सरकार में हैं पर वे सांविधानिक सीमा पार करके आरक्षण नहीं दिला पाएंगे। पांच फीसदी आरक्षण की मांग को लेकर गुर्जरों का यह पांचवां आंदोलन है। मुख्यमंत्री अशोक गहलोत कहते हैं कि राज्य स्तर पर जो कुछ हो सकता था, किया गया है। इन मांगों का ताल्लुक केंद्र से है।

संविधान में संशोधन के बगैर अब कुछ हो नहीं सकता। उन्होंने कहा कि जैसे अभी केंद्र ने दस प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया है, उसी तरह कोई रास्ता निकले तब इनकी मांगें पूरी हो सकती हैं। केंद्र में दस फीसदी आरक्षण की घोषणा के बाद से ही गुर्जर नेता आंदोलन की चेतावनी दे रहे थे। सवाल है कि केंद्र ने जो दस फीसदी आरक्षण आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए घोषित किया है, और जिसके लिए संविधान संशोधन भी किया गया है, वह न्यायिक समीक्षा की कसौटी पर भी खरा उतरेगा या नहीं? दूसरी ओर केंद्र के पास केवल गुर्जरों की ही मांग नहीं है। तकरीबन हरेक राज्य में किसी न किसी सामाजिक वर्ग ने आरक्षण की मांग कर रखी है। हरियाणा के जाट आंदोलन ने सोचने का मौका दिया कि सामाजिक बदलाव के वैकल्पिक रास्ते क्या हो सकते हैं। ये सामाजिक आंदोलन स्थानीय राजनीतिक दलों और समूहों को जन्म दे रहे हैं। तमाम राजनीतिक दल हैं, जो किसी एक समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं। राजस्थान के राजपूतों ने भी इसकी मांग की। राजस्थान में पूर्ववर्ती गहलोत सरकार ने ओबीसी आयोग की रिपोर्ट के आधार पर कृषक राजपूत वर्ग को आरक्षण देने का निर्णय लिया था।

2015 में गुजरात के पाटीदार आंदोलन ने देश में आरक्षण को लेकर नई बहस छेड़ी है। सवाल है कि आर्थिक रूप से समर्थ समुदाय आरक्षण की मांग क्यों करते हैं? राजस्थान में गुज्जर, आंध्र में कापू और महाराष्ट्र में मराठा आरक्षण की मांगें क्या कहती हैं? ये सभी जातियां प्रभावशाली हैं। इन्हें आरक्षण क्यों चाहिए? हरियाणा के जाट आंदोलन के समानांतर आंध्र में कापू आंदोलन चल रहा है। वे भी ओबीसी के तहत आरक्षण चाहते हैं। कापू समुदाय तेलुगू देशम पार्टी के साथ हैं। मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू का कहना है, मैं कापू समुदाय को आरक्षण देने को प्रतिबद्ध हूं। इसके लिए न्यायिक आयोग भी गठित किया जा चुका है। हमारी व्यवस्था में सार्वजनिक हित देखने की जिम्मेदारी विधायिका की है। इसलिए यह मसला राजनैतिक दलों के पास है। जाति से जुड़े कई सवाल अभी निरुत्तरित हैं। मसलन, क्या कोई वर्ग अनंत काल तक सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ा रहेगा? तमिलनाडु के बाहर के लोगों ने 80 के दशक में पहली बार वन्नियार का नाम सुना था।

1980 में गठित वन्नियार संघम ने उस साल चेन्नई में जबर्दस्त रैली की, जो इतनी जबर्दस्त थी कि उस पर काबू पाने के लिए फायरिंग की नौबत आ गई। यह रैली भी आरक्षण की मांग को लेकर थी। परंपरागत जातीय पदक्रम में वन्नियार दलितों के ठीक ऊपर माने जाते है पर अब काफी प्रभावशाली हैं। तमिलनाडु के 29 में से 13 जिलों में इनका प्रभुत्व है। ग्रामीण इलाकों से रेड्डियार, नायडू और मुदलियार जमीन बेचकर जा रहे हैं, जिसे वन्नियार खरीद रहे हैं। देश के दूसरे राज्यों की सामाजिक संरचना का बारीकी से अध्ययन किया जाए तो वहां भी हमें ऐसे बदलाव देखने को मिलेंगे। वन्नियार स्वाभिमान की तरह ये जातियां भी राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान के साथ सामने आ रही हैं। इसके राजनीतिक निहितार्थ पर हमें गंभीरता से विचार करना चाहिए।

> 2015 में गुजरात के पाटीदार आंदोलन ने देश में आरक्षण को लेकर नई बहस छेड़ी है। सवाल है कि आर्थिक रूप से समर्थ समुदाय आरक्षण की मांग क्यों करते हैं? राजस्थान में गुज्जर, आंध्र में कापू और महाराष्ट्र में मराठ आरक्षण की मांगें क्या कहती हैं? ये सभी जातियां प्रभावशाली हैं। इन्हें आरक्षण क्यों चाहिए? हरियाणा के जाट आंदोलन के समानांतर आंध्र में कापू आंदोलन चल रहा है। वे भी ओबीसी के तहत आरक्षण चाहते हैं। कापू समुदाय तेलुगू देशम पार्टी के साथ हैं

झोपड़पट्टी में रहने वालों की आबादी

- भारत में स्लम (झोपड़पट्टी) में कुल 6.5 करोड़ लोग रहते हैं
- 1करोड़ से ज्यादा लोग महाराष्ट्र में और इतने ही आंध्र प्रदेश में रहते हैं

आंकड़े लाख में

सर्वाधिक स्लम जनसंख्या वाले राज्य

महाराष्ट्र	118	मध्य प्रदेश	57
आंध्र प्रदेश	102	कर्नाटक	33
प.बंगाल	64	राजस्थान	21
उत्तर प्रदेश	62	छत्तीसगढ़	19
तमिलनाडु	58	दिल्ली	18

स्रोत : आवास एवं शहरी विकास मंत्रालय, राज्यसभा (जनगणना 2011)

ट्विट

एक चुनाव विश्लेषक के रूप में मानता हूं कि भाजपा हार रही है, लोकतांत्रिक या धर्मनिरपेक्ष कारणों से नहीं, बल्कि कृषि और नौकरियों के मुद्दों के चलते। एक नागरिक के रूप में मुझे नहीं लगता कि विपक्ष कोई वैकल्पिक नीति या दृष्टिकोण पेश कर पा रहा है। और एक एक्टिविस्ट के नाते मैं किसी विकल्प की दिशा में काम करना चाहता हूं। क्या आप भी चाहते हैं?

योगेन्द्र यादव, अध्यक्ष-स्वराज इंडिया
@_YogendraYadav

पर्यावरण **पंकज चतुर्वेदी**

उत्पादक का उत्तरदायित्व जरूरी

भारत में हर साल कोई 4.4 खरब लीटर पानी को प्लास्टिक की बोतलों में पैक कर बेचा जाता है। यह बाजार 7040 करोड़ रुपये सालाना का है। जमीन के गर्भ से या फिर बहती धारा से प्रकृति के आशीर्वाद स्वरूप निशुल्क मिले पानी को कुछ मशीनों से गुजार कर बाजार में लागत के 160 गुणा ज्यादा भाव से बेच कर मुनाफे का पहाड़ खड़ा करने वाली ये कंपनियां हर साल देश में पांच लाख टन प्लास्टिक बोतलों का अंबार भी जोड़ती हैं।

शीतल पेय का व्यापार तो इससे भी आगे है, और उससे उपजा प्लास्टिक कूड़ा भी यूं ही इधर-उधर पड़ा रहता है। ये बोतलें इस किस्म की प्लास्टिक से बनती हैं जिसका पुनर्चकण हो नहीं सकता। या तो यह टूट-फूट कर धरती को बंजर बनाता है, या इसे एकत्र कर ईंट भट्ठों या ऐसी ही भट्ठियों में झोंक दिया जाता है, जिससे निकलने वाला धुआं दूर-दूर तक लोगों का दम घोंटता है। यही हाल कोल्ड ड्रिंक्स की बोतलों, दूध की थैलियों, चिप्स आदि के पैकेटों का है। विडंबना है कि कुछ लोग कहते नहीं अघाते कि प्लास्टिक के आने से पेड़ बच गए।

हकीकत यह है कि पेड़ से मिलने वाले उत्पाद, चाहे वे रस्सी हों या जूट या कपड़ा या कागज, इस्तेमाल के बाद प्रकृति को नुकसान नहीं पहुंचाते। खाने-पीने की वस्तुओं से ले कर हर तरह के सामान की पैकिंग में प्लास्टिक या थर्मोकोल का इस्तेमाल बेधड़क जारी है, लेकिन कोई भी निर्माता जिम्मेदारी नहीं लेता कि इस्तेमाल होने वाली वस्तु के बाद उससे निकलने वाले इस जानलेवा कचरे का उचित निबटान करेगा। मोबाइल, कंप्यूटर और अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरणें की कंपनियों का मुनाफा असल उत्पादन लागत का कई सौ गुणा होता है, लेकिन करोड़ों-करोड़ विज्ञापनों में खर्च करने वाली कंपनियां इसे उपजने वाले ई-कचरे की जिम्मेदारी लेने को राजी नहीं होतीं।

एक कंप्यूटर में 1.90 किग्रा सीसा, 0.693 ग्राम पारा और 0.04936 ग्राम आर्सेनिक होता है, जो जलाए जाने पर सीधे वातावरण में घुलते हैं। शेष हिस्सा प्लास्टिक होता है। इसमें से अधिकांश सामग्री गलती-सड़ती नहीं। जमीन में

जज्ब हो कर मिट्टी की गुणवत्ता को प्रभावित करने और भूगर्भ जल को जहरीला बनाने का काम करती है। इसी तरह का जहर बैटरियों और बेकार मोबाइलों से भी उपज रहा है। रंगीन टीवी, माईक्रोवेव ओवन, मेडिकल उपकरण, फैक्स मशीन, टेबलेट, सीडी, एयर कंडीशनर आदि को भी जोड़ लें तो हर दिन ऐसे उपकरणों में से कई हजार खराब होते हैं, या पुराने होने के कारण कबाड़ में डाल दिए जाते हैं। ऐसे उपकरणों का मूल आधार ऐसे रसायन होते हैं, जो जल, जमीन, वायु, इंसान और समूचे पर्यावरण को इस हद तक नुकसान पहुंचाते हैं कि उससे उबरना लगभग नामुमकिन है। इस कबाड़ को भगवान भरोसे प्रकृति को नष्ट करने के लिए छोड़ दिया जाता है। यही नहीं, इन उपकरण की खरीद के दौरान पैकिंग और सामान की सुरक्षा के नाम पर कई किलो थर्मोकोल और पॉलीथीन का इस्तेमाल होता है, जिसे उपभोक्ता कूड़े में ही फेंकता है।

क्या अनिवार्य नहीं किया जाना चाहिए कि ऐसे पैकेजिंग मैटीरियल कंपनी खुद तत्काल उपभोक्ता से वापस ले? इन दिनों जोर-शोर से ई-रिक्शे को पर्यावरण-मित्र बता कर प्रचरित किया जा रहा हैं। लेकिन यह नहीं बताया जा रहा कि ई-रिक्शे के महत्त्वपूर्ण तत्व बैटरी के कारण देश का जल और जमीन तेजी से बंजर हो रहे हैं। औसतन हर साल एक रिक्शे की बैटरी के चलते दो लीटर तेजाब वाला पानी या तो जमीन पर या फिर नालियों के जरिए नदियों तक जा रहा है। ई-रिक्शा बेचकर खासी कमाई करने वाले उस रिक्शे की चार्जिंग, बैटरी की पर्यावरण-मित्र देखभाल की कहीं जिम्मेदारी नहीं लेते। यही हाल 'ऑटोमोबाइल क्षेत्र' का है। कंपनियां जम कर वाहन बेच रही हैं, लेकिन ईंधन से उपजने वाले प्रदूषण, खराब या पुराने वाहनों को चलने से प्रतिबंधित करने जैसे कार्यों के लिए कोई कदम नहीं उठातीं। बेकार टायर जलाए जाते हैं, उनका जहरीला धुआं परिवेश को दूषित कर रहा है, लेकिन कोई भी टायर कंपनी पुराने टायरों के सही तरीके से निबटान को आगे नहीं आती। किसी से छिपा नहीं है कि विभिन्न सरकारों ने पर्यावरण बचाने के लिए करों से अपना खजाना जरूर भरा हो, कभी पर्यावरण संरक्षण के ठोस कदम नहीं उठाए। भारत दिन-दुगनी रात चौगुनी प्रगति से उपभोक्तावादी देश बनता जा रहा है। जरूरी है कि प्रत्येक सामान के उत्पादक या निर्यातक को जिम्मेदारी लेने को बाध्य किया जाए कि उसके उत्पाद से उपजे कबाड़ या प्रदूषण के निबटारे की तकनीकी और जिम्मेदारी वह स्वयं लेगा।

परमात्मा नटराज है **ओशो**

निश्चित ही मैं नृत्य की बात करता हूं, क्योंकि मेरे लिए नृत्य ही पूजा है। नाच की और भी खूबी है कि जैसे-जैसे तुम नाचोगे, तुम्हारी जीवन-ऊर्जा प्रवाहित होगी। नाचने का अर्थ, तुम्हारी ऊर्जा बहे। दूसरी बात : नाच में अचानक ही तुम प्रसन्न हो जाते हो। इसीलिए तो हिंदुओं ने परमेश्वर के परम रूप को नटराज कहा है, कृष्ण को नाच की मुद्रा में, ओंठ पर बांसुरी रखे, मोर-मुकुट बांधे चित्रित किया है। पूछा है तुमने, 'नृत्य कब घटित होता है?' नृत्य तब घटित होता है जब नर्तक मिट जाता है। पश्चिम का बहुत बड़ा नर्तक हुआ निजिंस्की। ऐसा नर्तक, कहते हैं मनुष्य जाति के इतिहास में शायद दूसरा नहीं हुआ है। उसकी कुछ अपूर्व बातें थीं। एक तो यह थी कि जब वह नृत्य की ठीक-ठीक दशा में आ जाता था-जिसको मैं नृत्य की दशा कह रहा हूं, जब नर्तक मिट जाता है-तो निजिंस्की ऐसी छलांगें भरता था कि वैज्ञानिक चकित हो जाते थे। और साधारण अवस्था में निजिंस्की वैसी छलांगें नहीं भर सकता था। उसने कई दफे कोशिश करके देख ली थी। हर बार हार जाता था। जब उससे किसी ने पूछा कि इसका राज क्या है? उसने कहा, मुझे खुद ही पता नहीं। क्योंकि मैंने भी कई दफे कोशिश करके देख ली। जब यह घटती है तब घटती है। जब नहीं घटती तब मैं लाख उपाय करूं, नहीं घटती। कुछ क्षण को लगता है, गुरुत्वाकर्षण का मेरे ऊपर प्रभाव नहीं रहा। मैं एक पक्षी के पंख की तरह हलका हो जाता हूं। कैसे यह होता है, मुझे पता नहीं। एक बात भर समझ में आती है कि यह उन क्षणों में होता है जब मुझे मेरा पता नहीं होता, जब मैं लापता होता हूं। जब मैं होता ही नहीं तब यह घटता है। यह तो योग का पुराना सूत्र है। निजिंस्की को कुछ पता नहीं वह क्या कह रहा है। अगर उसे पूरब के शास्त्रों का पता होता तो वह व्याख्या कर पाता। विज्ञान कहता है-न्यूटन ने खोजा वृक्ष के नीचे बैठे-बैठे। गिरा फल और न्यूटन को खयाल आया, हर चीज ऊपर से नीचे की तरफ गिरती है। जरूर जमीन में कोई गुरुत्वाकर्षण, कोई कशिश, कोई ग्रेविटेशन होना चाहिए। न्यूटन ने एक बात देखी। हमने और भी एक बात देखी, जो न्यूटन ने नहीं देखी। और खयाल रखना, वही दिखाई पड़ता है जो हम देखने को तैयार होते हैं। कृष्ण ने कुछ और देखा, अष्टावक्र ने कुछ और। उन्होंने देखा कि ऐसी कुछ घड़ियां हैं जब अहंकार नहीं होता तो आदमी ऊपर की तरफ उठने लगता है; जैसे आकाश की कोई कशिश, कोई आकर्षण है। जैसे वैज्ञानिक कहते हैं ग्रेविटेशन, गुरुत्वाकर्षण, ऐसे अंतरतम के मनीषियों ने कहा है कि प्रभु का आकर्षण। ऊर्ध्व, ऊपर की ओर से उतरती कोई ऊर्जा और खींचने लगती है। लेविटेशन या ग्रेस, प्रसाद कहें।

रीडर्स मेल

प्रियंका पर मेहरबानी

प्रियंका गांधी के लखनऊ दौरे के मीडिया कवरेज को लेकर कई सवाल मन में घुमड़ रहे हैं। कई न्यूज चैनलों के सुर बदले से दिखते हैं। हालांकि प्रियंका के लखनऊ दौरे की खबरें खबर के लिहाज से अहम है और इस इवेंट को कोई भी मीडिया हाउस नहीं छोड़ सकता है। मगर जिस तरह से पिछले कुछ सालों से भाजपा को तवज्जो मिल रही थी, उसमें कहीं-न-कहीं बदलाव दिख रहा है। कुछेक चैनल को छोड़ दें तो आज का दिन कांग्रेस और प्रियंका का रहा। देखना है, यह कब तक बरकरार रहता है?

अजय यादव, गोरखपुर

राफेल पर संग्राम

राफेल विमान को लेकर कांग्रेस के आक्रामक रहने और लगातार प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को निशाना बनाने का भाजपा उसी के अंदाज में जवाब नहीं दे पा रही है। चाहे बात संसदीय समिति के गठन की कांग्रेस की मांग की हो या शर्तों में बदलाव की। भाजपा सिर्फ अपनी सफाई में यही कहती है कि कांग्रेस के आरोप निराधार हैं और दलाली की रकम नहीं मिलने की खीझ राहुल गांधी और कांग्रेसवाले उठा रहे हैं। मगर गौर से देखें तो बार-बार प्रधानमंत्री के खिलाफ सीधे तौर पर आरोप लगाकर कांग्रेस उसी मुद्दे को हवा देने में जी जान से लग गई है, जिसके दम पर भाजपा 2014 में सत्ता में आई थी।

सुष्मिता बनर्जी, कोलकाता

महिला क्रिकेट पर ध्यान दें

आईपीएल को भारत में किसी क्रिकेट टूर्नामेंट की तरह नहीं अपितु एक त्योहार की तरह समझा जाता है। महिलाओं ने भी क्रिकेट में अपनी क्षमता और काबिलियत को दर्शाया है, जिसके मद्देनजर इस साल होने वाले आईपीएल के दौरान महिला आईपीएल का छोटा टूर्नामेंट करवाने पर प्रशासक विचार कर रहे हैं। इसमें तीन टीम खेल सकती हैं। वर्ष 2018 में हुए आईपीएल के दौरान भी ऐसा ही कार्यक्रम आयोजित किया गया था, जिसमें दो महिला आईपीएल टीम के बीच मैच खेले गए थे। महिला आईपीएल पूरी तरह से आयोजित न हो पाने का सबसे बड़ा कारण पैसों की तंगी और किसी भी टीम के लिए बोली लगाने वाले खरीदार न मिल पाना बताया जा रहा है। बीसीसीआई को इस पर गंभीरता से विचार करना चाहिए।

निशांत रावत, दिल्ली विश्वविद्यालय

शोध में पिछड़ता भारत

हाल ही में अंतरराष्ट्रीय संगठन क्लेरिवेट एनालिटिक्स ने दुनिया के सबसे काबिल 4000 शोधकर्ताओं की सूची जारी की, जिसमें अमेरिका 2639 वैज्ञानिकों के साथ शीर्ष पर तो ब्रिटेन 546 वैज्ञानिकों और चीन 482 वैज्ञानिकों के साथ क्रमशः दूसरे व तीसरे पायदान पर रहे। इस सूची में भारत के केवल 10 शोधकर्ताओं के नाम शामिल हैं। हैरानी की बात यह है कि इन 10 भारतीय शोधकर्ताओं में केवल एक ही महिला है। हालांकि संगठन की सूची के अनुसार भारत में पिछले साल के मुकाबले पांच नये वैज्ञानिकों को शामिल किया गया है, लेकिन अब भी अमेरिका, ब्रिटेन और पड़ोसी प्रतिस्पर्धी देश चीन के मुकाबले भारत की यह संख्या बेहद कम है।

देवेन्द्र राज सुथार, ई मेल से

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा • राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण

वर्ष-28, अंक 9986

सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक सी बी सिंह द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3,4, सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा 705-706, सातवां तल, नवरंग हाउस, 21 के.जी. मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित।
समूह संपादक - मनोज तोमर। स्थानीय संपादक - रत्नेश मिश्र* ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय - 23352368, 23352369, 23352371, 23352372, फैक्स - 23352370, दूरभाष - नोएडा प्रेस 0120-2444755, 2444756 फैक्स - 2550750

आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2018-2020

*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी